हिन्दी की जिम्मेदारियाँ

- डॉ. जयन्त विष्णु नार्लिकर

समाज से यह अपेक्षा है कि वह विज्ञान की शक्ति को समझे और उसे विधायक कार्यों में लगाए तथा विनाशक कार्यों से दूर रखे। इसके लिए यह आवश्यक है कि विज्ञान के बारे में आवश्यक जानकारी समाज को सदैव मिलती रहे और इस बात से सभी सहमत होंगे कि इस समाज प्रबोधन का माध्यम समाज की 'अपनी' भाषा में हो।

भारत जैसे विशाल देश के लिए इस कार्य में हिंदी की भूमिका कितनी महत्वपूर्ण है यह अलग से समझाने की जरूरत नहीं। पिछले 10-15 वर्षों में भारत की विकसित देश बनने की ओर तेजी से दौड़ जारी है। ऐसी हालत में विज्ञान तथा तकनीक से मिलने वाले लाभों की अच्छी जानकारी मिलनी आवश्यक है। साथ ही साथ विज्ञान तथा तकनीक के अनुसंधानों से जुड़े दुष्परिणामों की भी जानकारी उपलब्ध होनी आवश्यक है।

पुराने जमाने में भक्ति रस प्रधान सुखी जीवन के उद्देश्य से सूरदास, तुलसीदास जैसे संत साहित्यकारों ने लोक प्रबोधन किया। इस जमाने में विज्ञान को जनसाधारण तक पहुँचाने का काम हिंदी को करना है। जो काम पहले ब्रजभाषा और अवधी-भोजपुरी भाषाओं ने संत साहित्य के लिए किया वही हिंदी को आज विज्ञान के लिए करना है। यद्यपि जिस पार्श्वभूमि में मैंने इस आवश्यकता पर जोर दिया है, उसके लिए आम सहमति अपेक्षित है फिर भी ऐसी भी कुछ लोगों की धारणा है कि जागतिक भाषा के रूप में अंग्रेजी भाषा हिंदी के बजाय अधिक प्रभावशाली होगी।

मैं इस धारणा से सहमत नहीं हूँ। अपनी दलील के समर्थन में मैं एक किस्सा सुनाता हूँ आधुनिक विज्ञान के शिखर तक पहुँचे हुए वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टाइन का। ऐसा कहा जाता है कि यदि आइन्स्टाइन अपने विषय पर किसी अन्य वैज्ञानिक के साथ चर्चा कर रहे हों तो चर्चा का आरंभ अंग्रेजी भाषा में होता था। पर चर्चा के दौरान अगर आइन्स्टाइन बहुत उत्तेजित हो जाते थे तो वे अपनी मातृभाषा जर्मन में बोलने लगते हैं। अपनी मातृभाषा में कोई भी व्यक्ति समझने-समझाने का काम सर्वाधिक कुशलता से कर पाता है।

तो हिंदी भाषा को इस कर्तव्य को निभाने के लिए आगे आना होगा। जहाँ तक हिंदीभाषी राज्यों का सवाल है वहाँ तो हिंदी का यह 'जानकारी की भाषा' जैसा कर्तव्य तो रहेगा ही पर अन्य राज्यों में भी हिंदी की विज्ञान समझने-समझाने की क्षमता उपयोगी साबित होगी क्योंकि वहाँ की भाषाएँ हिंदी से मिलने वाली जानकारी का लाभ उठा सकती हैं। पर इस भूमिका को निभाने के लिए हिंदी को और हिंदीभाषियों को अपने दृष्टिकोण को अधिक व्यापक बनाना होगा।

भाषा में वृद्धि क्यों होनी चाहिए?

यदि हिंदी को विज्ञान समझाने तथा समझने की भाषा बननी है तो उसमें विस्तार होना आवश्यक है। विज्ञान और तकनीकी की देनों का वर्णन करने के लिए सौ साल पहले की हिंदी पर्याप्त नहीं होगी। रेडियो, टेलीफोन, मोटरकार, टूथपेस्ट आदि असंख्य चीजों के नाम हम हर रोज के संभाषण, वर्णन, पठन आदि में लेते हैं। उनके

लिए अनुवादात्मक हिंदी शब्द बनाना मेरे विचार से व्यर्थ का परिश्रम है। रेलवे सिग्नल के लिए 'लोह चक्रगामिनी गमनागमन दर्शक' यद्यपि सही कहा जा सकता है तो भी उचित कदापि नहीं।

जब मैं स्कूल में पढ़ता था, मेरी पाठ्यपुस्तकों की हिंदी उर्दू शब्दों से मिश्रित हुआ करती थी। मुंशी प्रेमचंद की कहानियों या उपन्यासों की हिंदी पढ़ने में जो मजा आता था वह उन शब्दों के संस्कृत अनुवाद डालकर की गई 'परिष्कृत' भाषा से नहीं आता। आज बड़े परिश्रम से उस हिंदुस्तानी का संस्कृतीकरण करके बनाई भाषा कृत्रिम लगती है।

वास्तव में विज्ञान-तकनीक के विकास के साथ अंग्रेजी भाषा को अपने शब्द भंडार की वृद्धि करनी पड़ी। इसके अलावा अपनी साम्राज्यवाद की नीति के लिए संसार के कोने-कोने तक जाने वाले अंग्रेजों ने पराई भाषा के शब्द बिना हिचकिचाहट के समा लिए। अंग्रेजी शब्दकोश खोल कर देखें उसमें आम हिंदी भाषा से लिए शब्द भी पाएँगे। पराए शब्दों के इस्तेमाल से भाषा अपवित्र नहीं होती बल्कि अधिक तगड़ी बनती है। इसलिए बदलते माहौल में नए शब्दों को चाहे वे किसी भी भाषा से हों पर सर्वसाधारण रूप से इस्तेमाल किए जाते हों - अपने शब्द भंडार में समा लेना हिंदी के लिए भी आवश्यक है।

विज्ञान के पारिभाषिक शब्दों के लिए भारतीय भाषाओं में संस्कृतावलंबी नए शब्द बनाए जाते हैं। लेकिन यदि ऐसे शब्द साधारण बातचीत में इस्तेमाल न होते हों तो यह परिश्रम क्या व्यर्थ नहीं हुआ? इसके अलावा विभिन्न भारतीय भाषाओं में - संस्कृत से उत्पन्न होते हुए भी - पारिभाषिक शब्दों की एक-सूत्रता नहीं। उदाहरण के लिए हिंदी और मराठी के कुछ शब्द देखें। एटम को हिंदी में परमाणु और मराठी में अणु कहते हैं। मॉलेक्यूल को हिंदी में अणु तो मराठी में रेणु कहते हैं। अखिल भारतीय स्तर पर विशेषज्ञों की समिति सभी संस्कृत से निकली भाषाओं के लिए एक पारिभाषिक शब्द सूची बनाती तो यह संभव नहीं होता।

पर मेरे विचार से हिंदी को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत वैज्ञानिक या तकनीकी शब्द अपनाने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए। इससे हिंदीभाषियों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर होने वाली खोजों, घटनाओं आदि की जानकारी लेने में सुभीता होगा। ऐसी भूमिका हिंदी को कमजोर नहीं बल्कि सशक्त बनाएगी।

प्रसार माध्यमों का योगदान

आज की जीवनचर्या विविध प्रसार माध्यमों से अलिप्त नहीं रह सकती। समाचार, घटनाओं पर टिप्पणियाँ, राजनीतिक तथा सामाजिक मुद्दों पर चर्चा, खेल के विविध रूप इत्यादि पर रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र आदि जो समय खर्च करते हैं उसमें हिंदी का भी सहभाग रहना जरूरी है। ज्ञान-विज्ञान की वृद्धि में इन माध्यमों का योगदान भी अगर केवल अंग्रेजी में होने लगे तो यह हिंदी के लिए घातक सिद्ध होगा।

इस संदर्भ में यह एक अच्छी घटना है कि डिस्कवरी जैसे जानकारी के चैनल पर अंग्रेजी कार्यक्रमों को हिंदी में 'डब' किए रूप में भी दिखाया जाता है। पर इससे भी बढ़कर यह होगा कि ऐसे कार्यक्रम भारत में बनें और मूल हिंदी में बनें। चूँकि हिंदी जनता की भाषा है, ऐसे कार्यक्रम हिंदीभाषियों को अधिक रोचक लगेंगे।

इस संदर्भ में मैं अपने दो अनुभव यहाँ सुनाना चाहूँगा। जब कार्ल सेगन की मशहूर शृंखला 'कॉस्मॉस' भारत में दिखाई गई तब कार्यक्रम प्रसारक की विनती पर मैंने हर कड़ी के आरंभ में उस दिन के कार्यक्रम का सारांश हिंदी में सुनाया। महज पाँच मिनट के इस आख्यान के बारे में मुझे अनेक श्रोताओं से प्रतिक्रिया

आई कि "आपकी प्रस्तावना की बदौलत हमें कार्यक्रम समझने में सुविधा हुई"। तत्पश्चात् मैंने कोई 17 कड़ियों का एक कार्यक्रम 'ब्रह्माण्ड' नाम से बनाया जो हिंदी में था और दूरदर्शन पर कई बार दिखाया गया। यहाँ भी मुझे असंख्य श्रोताओं से अनुकूल प्रतिक्रियाएँ मिलीं। मेरा दूसरा अनुभव था The Astronomical Society of India की राष्ट्रीय सभा का जो 1981 में गोरखपुर में आयोजित की गई थी। मुझे उसमें एक सार्वजनिक व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया गया था। सोसायटी की प्रथा के अनुसार यह व्याख्यान अंग्रेजी में होने वाला था। पर जब व्याख्यान का समय आया, लेक्चर हॉल श्रोताओं से ठसाठस भर गया था। उसे लक्ष्य कर व्याख्यान के आयोजकों ने मुझसे विनती की - "ये सब श्रोता अधिकांश हिंदीभाषी हैं। यदि आप हिंदी में बोलें तो श्रोताओं को वह बहुत रोचक लगेगा।" मैंने तब तक हिंदी में एक घंटे का भाषण नहीं दिया था, न तो मैं हिंदी में बोलने का अभ्यास करके आया था। फिर भी मैंने यह आह्वान स्वीकार किया। जब मैंने शुरुआत की - "देवियों और सज्जनों....." तब तालियों की गड़गड़ाहट हुई जो आज भी मेरे कानों में गूँज रही है।

कम्प्यूटर से दोस्ती

ये सब बातें कहने सुनने पर एक अहम मुद्दा है कम्प्यूटरों से जुड़ा। जो भाषा आज कम्प्यूटर के उपयोग में हाथ बटा सकेगी वही भाषा आज के माहौल में टिकेगी और पनपेगी। हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का इस्तेमाल कम्प्यूटर पर लेखन के लिए, ईमेल के माध्यम स्वरूप, वेबसाइट पर जानकारी की खोज में इत्यादि रूपों में होने लगा था। एक कठिन प्रश्न लिपियों का है / था, जो अब अधिकतर उपयोगों के लिए सुलझ गया है। लिखे लेख का संपादन, मुद्रण आदि अब अंग्रेजी को उपलब्ध सुविधाओं का फायदा उठाने लगे हैं।

पर केवल सॉफ्टवेयर निर्माण पर्याप्त नहीं! जैसी कि अंग्रेजी में कहावत है, आप घोड़े को पानी के पास ले जा सकते हैं पर उसे पानी पीने को बाध्य नहीं कर सकते। कम्प्यूटर हिंदी के इस्तेमाल के लिए सब सुविधाएँ प्रदान करने पर उनको काम में लाने की जिम्मेदारी हिंदी भाषियों की है। इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए जनजागरण और जनशिक्षा की आवश्यकता है। ऐसे सभी लोगों को जो हिंदी से आत्मीयता रखते हैं, इस बात की जानकारी मिलनी चाहिए कि कम्प्यूटर में क्या-क्या सुविधाएँ उपलब्ध हैं जिनका वे फायदा उठा सकते हैं।

वैज्ञानिकों का फर्ज

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस के आरंभ में लिखा -

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा

भाषा निबद्धमतिमंजुलमातनोति।

यद्यपि यह ग्रंथ रचना 'स्वान्तः सुखाय' की गई, गोस्वामीजी ने रामायण, राममहिमा, रामभक्ति आदि का प्रसार किया और जनसाधारण में एक आत्मविश्वास की भावना आरोपित की। सुविचार का प्रचार किया। भटकती जीवन शैली की दिशा वर्णन किया।

अधिकांश वैज्ञानिक ऐसा कहेंगे कि वे विज्ञान के क्षेत्र में शोध कार्य और शिक्षादान स्वान्तः सुखाय कर रहे हैं। अपने शैक्षिक उद्देश्यों को हासिल करने के सिवाय उनका जनसाधारण से कोई लेना देना नहीं।

मेरे विचार से यह भूमिका आज के काल में उचित नहीं। समाज एक स्थित्यंतर का अनुभव कर रहा है जिसकी प्रेरक शक्ति विज्ञान में है। इस स्थित्यंर में धनात्मक/ऋणात्मक दोनों तरह के अनुभवों का सामना उसे करना पड़ रहा है। कभी-कभी तो धनात्मक/ऋणात्मक

प्रबोधन की आवश्यकता है, जानकारी की आवश्यकता है; जो उसे वैज्ञानिक ही दे सकते हैं। कम से कम योग्य निर्णय लेने के लिए संबंधित तथ्य कौन-कौन से हैं इतना तो वैज्ञानिक स्पष्ट कर सकते हैं ताकि समाज सोच समझकर सही निर्णय ले।

अतः विज्ञान और समाज के बीच की खाई उथली और सँकरी बनाने की जिम्मेदारी वैज्ञानिकों की है। जनसाधारण की भाषा में विज्ञान की खूबियाँ, उसकी खोजों का महत्व, तकनीक के धनात्मक/ऋणात्मक पार्श्वप्रभाव आदि जानकारी देने में वैज्ञानिकों को हाथ बटाना चाहिए। हाथी दाँत की मीनार से उतरकर वैज्ञानिक जनसाधारण से वार्तालाप करने जाएँ। यह रोज रोज की बात नहीं। हफ्ते में एक दिन भी इस विज्ञान प्रसार के लिए कल्याणकारी साबित होगा।

(हिंदी भवन, भोपाल में श्री नरेश मेहता स्मृति वाङ्मय सम्मान के अवसर पर आठवीं शरद व्याख्यानमाला में 29-1-2011 को दिया गया व्याख्यान)